जनचेतना का प्रगतिशील कथा-मासिक

ISSN 2454-4450

मूल्य ₹ 60

हंस

दिसंबर 2023

संपादक
संजय सहाय
•
प्रबंध निदेशक
रचना यादव
•
व्यवस्थापक/सह-संपादन सहयोग
वीना उनियाल
•
संपादन सहयोग
शोभा अक्षर
माने मकर्तच्यान(अवैतनिक)
•
प्रसार एवं लेखा प्रबंधक
हारिस महमूद
•
शब्द-संयोज़न एवं रूपांकन
प्रेमचंद गौतम
•
ग्राफिक्स
साद अहमद
•
सोशल मीडिया
रिया खरक्वाल
•
कार्यालय सहायक
किशन कुमार, दुर्गा प्रसाद
•
मुख्य प्रतिनिधि (उ.प्र.)
राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल
•
रेखाचित्र
कृष्ण कुमार 'अजनबी', अनुभूति गुप्ता

कार्यालय
अक्षर प्रकाशन प्रा. लि.
4229/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-2
व्हाट्सऐप : 9717239112, 9560685114
दूरभाष : 011-41050047
ईमेल : editorhans@gmail.com
वेबसाइट : www.hanshindimagazine.in

मूल्य : 60 रुपए प्रति
वार्षिक : 700 रुपए (व्यक्तिगत)
रजिस्टर्ड : 1100 रुपए
संस्था/पुस्तकालय : 900 रुपए (संस्थागत)
रजिस्टर्ड : 1300 रुपए
विदेशों में : 80 डॉलर
सारे भुगतान मनीऑर्डर/चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. (Akshar Prakashan Pvt. Ltd.) के नाम से किए जाएं.

हंस/अक्षर प्रकाशन प्रा.लि. से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे. अंक में प्रकाशित सामग्री के पुनर्प्रकाशन के लिए लिखित अनुमति अनिवार्य है. हंस में प्रकाशित रचनाओं में विचार लेखकों के अपने हैं. उनसे हंस की सहमति अनिवार्य नहीं है. साथ ही उनके मौलिक या अप्रकाशित होने का उत्तरदायित्व संपादक और प्रकाशक का नहीं है बल्कि यह दायित्व रचनाकार का है.

प्रकाशक/मुद्रक : **रचना यादव खन्ना** द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा.लि., 4229/1, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित एवं चार दिशाएं, जी-39/40, सेक्टर-3, नोएडा- 201301 (उ.प्र.) से मुद्रित. संपादक–संजय सहाय.

दिसंबर, 2023

मूल संस्थापक : **प्रेमचंद : 1930**
पुनर्संस्थापक : **राजेन्द्र यादव : 1986**

पूर्णांक-446 वर्ष : 38 अंक : 5 दिसंबर 2023

आवरण : अपाला वत्स

जनचेतना का प्रगतिशील कथा-मासिक

इस अंक में

संपादकीय
4. संशय के दस बरस : संजय सहाय

अपना मोर्चा
5. पत्र

न हन्यते
10. साहित्य के अनंत पथ के यात्री : से.रा. यात्री : भारत भारद्वाज
12. कोई मेरे यार आशु की नींद में खलल न डाले : रविशंकर सिंह
15. दुनिया बदलने के लिए बेचैन एक यायावर : रमाशंकर सिंह

मुड़-मुड़ के देख
17. खेलः राजी सेठ (हंस अक्तूबर 1986)

आने वाले दिनों के सफ़ीरों के नाम
25. जानकर चलो, मानकर नहीं : (आबिद सुरती से व्योमा मिश्र का संवाद)

कहानियां
36. रहमतगंज के जिल्लू मियां : जयनंदन
41. भूरे पासी को लिखे प्रेमपत्र : प्रमोद द्विवेदी
48. गंध : योगिता यादव
52. ईना, मीना और अकिला फुआ : प्रीति प्रकाश
62. अलविदा : गी द मोपासां (फ्रांसीसी कहानी) (अनुवाद : अशोक कुमार)

कविता
60. वैभव शर्मा, सोनी पाण्डेय
61. सौरभ राय, चाहत अन्वी

लेख
65. दलित स्त्री–संघर्ष और चुनौतियां : आरती

ग़ज़ल
82. रवि प्रताप सिंह
97. कविता विकास

लघुकथा
85. सुरेश बरनवाल
98. मनोहर जमदाडे

परख
69. जन-आंदोलन का तटस्थ लेखा-जोखा : दिनेश श्रीनेत
72. होलोकास्ट की पुनर्रचना और दर्द से गुजरता सिनेमा : वैभव मणि त्रिपाठी
74. साठोत्तर कहानी की अंतर्वस्तु और शिल्प की पड़ताल : अरुण होता
77. साहस और संघर्ष का अदम्य प्रयास : सुषमा मुनीन्द्र
79. ठहरे हुए लोगों की गतिशील कहानियां : मनोज कुमार पांडेय
83. अबूझ संसार की अंतर्यात्रा : मनीष वैद्य
86. आरंभिक आधुनिकता की अलक्षित वैचारिकी : मयंक

शब्दवेधी/शब्दभेदी
89. अब और युद्ध नहीं : तसलीमा नसरीन

रेतघड़ी
91-98

संशय के दस बरस

धुएं की घुमावदार लकीरें ऊपर पहुंचते-पहुंचते बिखर जा रही हैं. हल्की-सी धुंध की पर्त बनकर छत से लटकी हुई हैं. इसका स्रोत- पाइप वाला वह आदमी दस साल से दिख नहीं रहा. फिर भी वह हमारे बीच ही है. या यूं कहें कि हम ही उसके इर्द-गिर्द मंडराते रहते हैं. मतलब, अगर वह नहीं होता तो यह धुआं क्यों होता, उसकी गंध क्यों होती, उसकी वह कुर्सी क्यों होती? तौलिया क्यों होता? तो साफ है कि वह है! यह बात दीगर है कि वह हमारे बारे में क्या सोच रहा है, हमें नहीं पता. हम सिर्फ अंदाजा लगा सकते हैं. वह आदमी हमारे काम को देख खट्टा-सा मुंह बना रहा है, कि कुढ़ता जा रहा है या फिर जैसे कुछ लोग 'हंस' को पढ़कर अपनी तेजाबी राय बिना लाग-लपेट के दे मारते हैं और कुछ तो बिना पढ़े ही ऐलान कर देते हैं कि हंस का कबाड़ा कर दिया 'इन लोगों' ने! ऐसा ही कुछ वह भी बुदबुदाता होगा. फिर तो वाकई यह बेहद डरावना है. मैं भी तो जाने क्या-क्या बेवकूफियां करता रहा हूं. खैर, हजामत तो रोज बनाता ही होगा, अपनी भी और जाने कितनों की! फिर आदतन छैल-छबीला बना क्या-क्या न करता होगा, चाहे लोगों की सुलग-सुलग कर राख क्यों न हो जाए. बहरहाल, छोटी-मोटी मानवीय कमजोरियां, शरारतें और थोड़ा-सा पाजीपन ही तो है जिसने संभवतः इस आदमी को इंसान बनाए रखा है. वरना पैगम्बरों की तरह बाल-दाढ़ी बिखराए, हम जैसे पिस्सुओं को सटाए, प्रवचन बांचते न मिल जाता? बैकुंठ का आकर्षण इस आदमी को कभी रहा ही नहीं, कि वहां जाकर 'हाय रम्भा...!' 'ओ तेरे की, वह रही मेनका!' - चीखे और हम भिखारियों की तरह उससे चिरौरी करते रहें, गुरु हमें भी साथ ले चलते! भाई, उन्हें इसकी जरूरत नहीं थी! उनकी मेनकाएं, रम्भाएं मर्त्यलोक में ही उतर आती थीं, उनका 'हासिल' थीं. आधी रोटी आधी बोटी से अधिक की चाहत नहीं थी. बाकी जो कुछ था संसार का था. करीने से इस्तरी किए कपड़े, पाइप, तंबाकू और एक अदद कंघी में ही उस आदमी की जरूरतें सिमट जाती थीं. अंधविश्वासों को ठिकाने लगाने में और ईश्वरों को निपटाने में उस आदमी का कोई जोड़ नहीं था.

खैर, जो भी कहो, अपने इन तमाम दोषों को तमगे की तरह सीने पर पिरोये वह आदमी रहा भरोसेवाला! और भरोसा भी कितने तरह का! दुनिया भर में घटित हो रहा अन्याय हो, असमानताएं हों, भेदभाव हों, सामाजिक-राजनीतिक संकट हों, या न्यायिक विचलन, साहित्य-कला या सौंदर्यबोध से संबंधित मुद्दे हों या अभिव्यक्ति की आजादी का मामला हो, हर दिन ऐसा कुछ आ टकराता है कि लगता है वह आदमी सिर्फ गोचर होता तो शायद चीजें इतनी विकृत न होतीं. तार्किकता, विवेक और संवेदनाएं एक अंगविशेष के दक्खिन में लुढ़कते नजर न आते. संयोग देखिए कि उसे अदृश्य हुए जो दस साल बीते हैं उसी में उसकी कमी सबसे ज्यादा खली है. उसकी याद ने हद से अधिक सताया है.

क्या वह आदमी दिखता होता तो वाकई रेफ्रीजिरेटरों में घुसकर मांस पहचानती जंगली कुत्तों सी भीड़ न होती? बैंकों के आगे कतार में बूढ़े-बीमार दम न तोड़ते? नदियों में बहती लाशों के ढेर चील-कौए... जली-अधजली सड़ती दुर्गंध न होती? गिद्धों में बदलते लोग न होते, यूक्रेन और फिलिस्तीन न होता?... जानता हूं यह सब खुद को बहलाने जैसा है और बूढ़ा होता वह आदमी- जो दस साल से गायब है, के कंधों पर यह सारा बोझ थोप देने का कोई औचित्य भी नहीं बनता है. ना ही यह अपेक्षा एक स्वस्थ अपेक्षा मानी जाएगी. इसे तो नितांत घटिया, कायरता भरे लालच की संज्ञा ही दी जा सकती है!

''हमने प्रतिरोध किया है, करते रहे हैं. कमोबेश सबने किया है, लिखा भी है. बंधुओं-सखियों, मैडमों-सरों सभी ने...'' मैं धुंए में झांककर कहता हूं. ''उधर 'हंस' की जिम्मेदरियां रचना जी ने जिस तरह उठा रखी हैं, वह कल्पनातीत है. रोज कुछ न कुछ गुणात्मक जोड़ रही हैं. जो लोग जब तक साथ चले संगम, विभास, बलवंत, इब्बार रब्बी, सुभाष, कविता, हरेप्रकाश, नाजरीन, गोपाल, प्रतिभा, उदय शंकर, विपिन... और जो लोग साथ चल रहे हैं वीना, हारिस, किशन, दुर्गा, प्रेमचंद, रिया, साद, शोभा, माने- सबका यूटोपिया काफी कुछ मेल खाता है. ऊपर से ललानी जी, हरिनारायण, अर्चना वर्मा, वेददान सुधीर, संजीव, गौरीनाथ, दिनेश खन्ना, अजित राय, अजय नावरिया, प्रियदर्शन, संजीव कुमार, अरविंद जैन, अशोक कुमार, गीताश्री और जाने कितने हितैषियों की भौतिक-अभौतिक उपस्थिति और बहुमूल्य परामर्शों और पाठकों के सहयोग ने 'हंस' को गतिमान बनाए रखा है.

- पूरी फोन डायरेक्टरी बांचने की जरूरत नहीं है सिर्फ कौरव सेना कहने से ही काम चल जाता... कहानियां देखते हो?'

- कोशिश करता हूं.

- खाक कोशिश करते हो. अच्छा लाओ, दिखाओ क्या लिखा है?

धुएं से एक हाथ बाहर आता है...(थोड़ी देर की चुप्पी)

- निहायत अश्लील...तुम तो यार बेहतर होगा, कविताओं में शिफ्ट कर जाओ.

- जैसे मैंने आपका लिखा नहीं पढ़ा...मुंह मत खुलवाइए. वैसे भी भोजपुरी और मगही दोनों का असर है तो भाषा का अश्लील होना ही उसकी तमीज मानी जानी चाहिए. जैसे सांड का चरित्र उसका चरित्रहीन होना ही होता है...

- अबे, हमारा ज्ञान हम्हीं को पेल रहे हो...वैसे गालियों के मामले में अग्रेरियन (आगरा वाले) तुम पर भारी पड़ेंगे.

इस बात से पूरी तरह असहमत होते हुए भी मैं चुप हूं. वे सब बातों में उलझे हुए हैं. कमरे में धुआं कुछ ज्यादा ही भर गया है. अब चलने का समय करीब आ गया है. कैलेंडर पर नजर दौड़ाते मैं सोच रहा हूं – आखिर दस बरस एक लंबा वक्त होता है.

अपना मोर्चा

वर्जनाओं के पार

'हंस' अक्तूबर 2023 अंक. पंकज सुबीर की कहानी 'खजुराहो' पढ़ी. अद्भुत शैली! कथ्य का कायल हुए बिना नहीं रह सका. मगर 'खजुराहो' कहानी मुझे पूरी तरह नियोजित लगी. पता नहीं सुबीर जी स्त्री मन की इन गुत्थियों अथवा कुंठाओं की पहचान कैसे कर पाए? क्या महिला समाज इससे सहमत हो सकेगा? यहां महिला पात्रों के चुनाव में एकरूपता है. कहानी के सभी महिला पात्र खाए-पिए, उच्च शिक्षा प्राप्त अघाए हैं! 'और भी गम हैं मुहब्बत (काम तुष्टि) के सिवा' से अछूती. ये सभी वैवाहिक जीवन से असंतुष्ट हैं, अपनी पसंद के प्रेम विवाहों के बावजूद. उन्हें मन की अथवा देह की तुष्टि नहीं मिल पाई. इनके अनुसार सबसे अपवित्र शब्द पवित्र है. स्त्रियां इन थोपी गई वर्जनाओं में क्यों घुटें. सुनंदा (डायरी लेखिका) ने भी अपना लियो ग्रांडे एक क्यू.एच. में पा लिया है. ये क्यू. एच. सब कोई नहीं हो सकता है, हजारों में कोई एक. महिलाएं इन्हें अपना लिस्ट देती हैं और ये विशेषज्ञ उनको वांछित व्यंजन परोसकर संतुष्ट कर देता है. यह लिस्ट और इनकी विशेषज्ञता का आधार कहानी में नहीं दर्शाया गया है. पशुओं में एक सांड हुआ करता है जो ऐसा विशेषज्ञ होता है.

इस कहानी के सभी स्त्री पात्र किसी न किसी रूप में एक-दूसरे को जानते हैं. प्रेरित भी हैं. सभी हवेली में पड़ी या रखी उस डायरी और डायरी लेखिका से परिचित हैं. कहानीकार ने बड़ी चतुराई से इनका संयोजन किया है. ये सभी महिलाएं उम्र के तीसरे दशक में प्रवेश कर चुकी हैं. संतान इनकी लिस्ट में अभी नहीं है. यह राह अपार पीड़ा से गुजरकर प्राप्त होने वाली है शायद इसलिए. दांपत्य जीवन का गार्हस्थिक सुख और मातृत्व सुख इनके लिए बेमानी है. टूट टाट घर टपकत घर खटियो टूट पिया की बांह असीसवां सुख को लूट या आग लागि घर जरिगा बड़ सुख कीन पिय के हाथ घइलबा भरी-भरी दीन का सुख इनका लक्ष्य नहीं है न इनमें इनका विश्वास है. ये सभी एक्सप्लोर कर रही हैं वर्जनाओं के पार.

महेंद्र नारायण सिंह

ईमेल : mnsinghmaithon@gmail.com

दरियाई घोड़े से असंतुष्ट

'हंस' अक्तूबर 2023 अंक के संपादकीय 'दरियाई घोड़े' से असंतुष्ट हूं. अंतरराष्ट्रीय युद्ध के दौरान हमारे देश का क्या किरदार है या हमारे मंत्री क्या कर रहे हैं इस पर लिखने की बजाय हमारे देश में ऐसी परिस्थिति नहीं पैदा हुई जैसी यूक्रेन और गाज़ा में हुई, उस बात के लिए देश की सराहना करनी चाहिए. खालिस्तान के पक्ष मे खड़े रहेंगे तो एक और झंडे को जन्म देने की नौबत आएगी.

अशोक वाजपेयी के साहित्य दर्शन में 'कायर चुप्पी और चतुर चुप्पी' का मतलब समझ नहीं आया. उनकी कही एक बात से मैं सहमत हूं कि 'साहित्य से इतर हमने कोई महत्वपूर्ण वैचारिक योगदान किया हो ऐसा मुझे नहीं लगता'. साहित्य स्वयं एक विचारधारा है इसे हमें नहीं भूलना चाहिए.

पंकज सुबीर की कहानी 'खजुराहो' अपने आप में एक विचारात्मक कहानी है जो स्त्रियों की जैविक वृत्तियों को सामने लाती है जिसके लिए मैं लेखक की ईमानदारी की कद्र करता हूं ठीक वैसे जैसे 'लिहाफ़' के लिए मैं इस्मत आपा की कद्र करता हूं.

मनीषा कुलश्रेष्ठ का यात्रा-वृत्तांत बड़ा रोचक है. आर्थर डॉयल के काल्पनिक पात्र शरलॉक की जीवंतता का परिचय 221 बी बेकर से होता है. ऐसे ही हमारे देश के एक काल्पनिक पात्र मुल्ला नसरुद्दीन की याद